International Journal of Applied Research 2023; 9(10): 247-249

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor (RJIF): 8.4
IJAR 2023; 9(10): 247-249
www.allresearchjournal.com
Received: 20-07-2023
Accepted: 25-08-2023

डॉ० बिजेन्द्र विश्वकर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
बलदेव साहू महाविद्यालय,
लोहरदगा, झारखंड, भारत

Corresponding Author:
डॉ० बिजेन्द्र विश्वकर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
बलदेव साहू महाविद्यालय,
लोहरदगा, झारखंड, भारत

प्रगतिवादी काव्य और त्रिलोचन की काव्य भाषा

डॉ० बिजेन्द्र विश्वकर्मा

प्रस्तावना

"छायावाद में काव्य का स्तर ऊँचा हुआ है किन्तु भाषा घायल दिखायी देती हैं। संस्कृत गर्भित वाक्यों में हिन्दी का स्वरूप खुलता नहीं दिखायी देता।"[1] इस काल में कल्पना बाहुल्य के साथ–साथ अनावश्यक शब्द–बाहुल्य भी बहुत मिलता है। भाव–कोश सीमित होने के कारण शब्द–कोश भी सीमित था। हर रचनाकार के कुछ अपने प्रीतिकर शब्द थे जो तकियाकलाम की तरह प्रयुक्त होने लगे थे। इस रूढ़ि के अपवाद मात्र निराला थे जो छायावादी सीमाओं के अतिक्रमण में समर्थ थे। और, अनुभव के समांतर शब्द–संयोजन में पूर्णकाम थे। इसीलिए वे प्रगतिशील कवियों के सदा 'आइकॅन' बने रहे। शमशेर ने भी लिखा है कि जब–जब वे राह में भटके, तब–तब सघन तम में महाकवि निराला उनकी आँख बने हैं।

ठीक इसी प्रकार त्रिलोचन भी कहते हैं– 'अपनी राह चला, आँखों में रहे निराला।' निराला के प्रति लगभग सारे कवियों ने इसी तरह आभार–ज्ञापन किया है।

केदारनाथ सिंह ने छायावाद की भाषिक संवेदनाओं की सधी पड़ताल की है। वे कहते हैं कि काव्य भाषा की इकाई शब्द है या वाक्य, यह विमर्श का विषय है, कुछ भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने शब्द को काव्य की इकाई माना है तो कुछ ने वाक्य को। अरस्तु ने वाक्य को ही सम्भाषण की इकाई माना है। बी.एल. होर्फ भी समर्थन करता हैः ''वाणी का तत्त्व वाक्य है, शब्द नहीं।"[2] इसी प्रकार कई अन्य कवियों एवं समीक्षकों ने वाक्य को ही काव्य की इकाई स्वीकार किया है। भारतीय दार्शनिक आचायों ने भी वाक्य को ही पूर्ण भाव की अभिव्यक्ति में समर्थ बताया है– ''अर्थकत्वादेंक वाक्यं साकांक्षं चेद्विभागे स्यात्"[3] आचार्य जगन्नाथ का 'वाक्यं रसात्मक काव्यम्' तो बहुश्रुत और बहुद्धृत है ही।

साहित्य के जनतन्त्र में शब्द काव्य की इकाई है, को बहुमत हासिल है। ऐसे लोगों में रूपवादी तथा वस्तुवादी दोनों ही शामिल हैं। मलार्मे की यह उक्ति जगजाहिर है कि कविता भावों से नहीं, शब्दों से रची जाती है। एफ.आर. लीविस भी मानता है कि कविता शब्दों से बनती है।[4] काव्य चिन्तकों ने ही नहीं, काव्य–सर्जकों ने भी शब्द को ही काव्य की मूलभूत इकाई स्वीकार किया है। आर.एस. टॉमस ने भी कहा है कि यदि सचमुच ही मैंने कविता लिखी है तो उसे मैंने शब्दों से ही बनाया है। अज्ञेय भी कहते हैं कि ''कवि के नाते जो मैं करता हूँ, वह भाषा के द्वारा नहीं, केवल शब्दों के द्वारा।"[5]

अज्ञेय ने एक जगह और उद्घोषणा की है कि "काव्य सबसे पहले शब्द है। और सबसे अन्त में भी यही बात बच जाती है कि काव्य शब्द है।"[6] यहाँ अज्ञेय की शब्द अवधारणा रूपगत है। यहाँ शब्दों के सौष्ठव और उनके पारस्परिक सम्बन्धों पर ज्यादा बल है। इनके लिए काव्य शब्द–लीला है. शब्द–विलास है। परमानन्द श्रीवास्तव लिखते हैं कि "अज्ञेय के लिए शब्द के उपयोग की सार्थकता शब्द के परिष्कार में रही है। त्रिलोचन के लिए शब्द का अर्थ है जीवन से घनिष्ठ साक्षात्कार।"[7]

नामवर सिंह भी कहते हैं "'शब्द' से मोह अज्ञेय को भी रहा है। त्रिलोचन का भाव भिन्न है यह शब्द–मोह नहीं, लगाव है।"[8] त्रिलोचन के शब्दों में जीवन है और जीवन के तात्पयों की व्याख्या है। शब्द के बारे में त्रिलोचन का मन्तव्य है–

"शब्दकार, इन शब्दों में जीवन होता है
ये भी चलते–फिरते और बात करते हैं
तोष, रोष–जब जैसे भावों से भरते हैं
तब वैसे ही अथों का व्यंजन होता है
शब्दों में भी हाड़, माँस है, जीवन धरकर
वे भी जीवधारियों के स्वर यन्त्र सँभाले
स्फुट, अस्फुट दो धाराओं में प्रवहमान हैं।"[9]

इसी के समान्तर अशोक वाजपेयी की 'शब्द' शीर्षक कविता को भी देखें–

'शब्द छूता है शब्द को
शब्द को शब्द चूमता है
दो शब्दों के बीच
सिर धरता है
एक शब्द।
शब्द को बेधता है शब्द
शब्द को भरता है शब्द
शब्द को मथता है शब्द।
शब्द नाचता है
मौन को
संक्षिप्त अनन्त में ढालते हुए।'

यहाँ सर्जन–प्रक्रिया में शब्द के विलास का चित्र है। रामस्वरूप चतुर्वेदी कीः भाषा में ही देखें तो–

''रति–प्रसंग का अतिक्रमण काव्य की रचना–प्रक्रिया में कितने सूक्ष्म रूप में कैसे होता है, यह संक्षिप्त कविता इसका बेजोड़ उदाहरण है। शब्द और सर्जन के 'संक्षिप्त अनन्त' में ढलने की प्रक्रिया भी वैसे ही सूक्ष्म और सघन रूप में अंकित हुई है।''[10] सभी प्रगतिशील आलोचक और स्वस्थ कवियों के लिए–

'कविता में शब्द कहाँ से आते हैं–
कोष से, स्मृति से, दूसरी कविताओं से?'
अशोक वाजपेयी की काव्यपंक्ति अपने में पूर्ण है। पहली पंक्ति प्रश्न है तो दूसरी उसका मुकम्मल उत्तर। मगर उत्तर है–
'कविता के सन्नाटे में शब्द शब्द को पुकारता है।'
निश्चय ही, ये कविता में सन्नाटा सुनते हैं, जीवन का कोलाहल नहीं। गरज कि त्रिलोचन का शब्दों से, जीवन से गहरा सरोकार है। इसलिए त्रिलोचन शब्द पर ज्यादा बल देते हैं तो अपनी समूची जीवन–आस्था को ही प्रमाणित एवं सत्यापित करते हैं। वे 'नगई महरा' जैसे इतिवृत्तात्मक रचना में भी यह कहने से बाज नहीं आते कि–

'' ऐसा कम होता है बहुत कम
जब शब्द किसी समय जी से बतियाने लगें''[11]

शब्दों से यही आत्मीय और अन्तरंग लगाव मरते समय एक गहरे अफसोस में तब्दील हो जाता है। एकमात्र, अकेला अफसोस दारुण दुःख का पर्याय हो जाता है–

''मुझे अपने मरने का
थोड़ा भी दुःख नहीं
मेरे मर जाने पर
शब्दों से
मेरा सम्बन्ध
छूट जायेगा।"[12]

इस सन्दर्भ में रूपवादी दृष्टि और वस्तुवादी दृष्टि को रेखांकित करते हुए शमशेर कहते हैं कि ''शब्द समाज के दैनंदिन भरपूर जीवन–संघर्ष से हर हर होते हैं और वहीं अपने अर्थवैभव को प्राप्त करते हैं उन्हीं के सम्मत आकलन की परम्परा साहित्यिक रूप–कवियों की पूँजी होती है, लेकिन अगर केवल उसी को वह अपनी पूँजी समझकर, समाज के व्यवहार, जीवन्त, परिवर्तनशील अर्थसमूहों की ओर से उदासीन रहते हैं तो यह रूप–प्रकारवादी फार्मलिस्ट हो जाते हैं।'' आगे वे लिखते हैं कि ''केदार और त्रिलोचन निःसन्देह 'रूप–प्रकार' को भली–भाँति समझते हैं। मगर वे इसलिए रूप–प्रकारवादी नहीं है कि वे रूप–प्रकार के अन्दर के रूप का अन्वेषण नही करते, यानी उस रूप का जिसमें वे अपने को उपलब्ध करें, यह उनका उद्देश्य नहीं है। उनके कवि की आत्मोपलब्धि जहाँ हो चुकती है, वहाँ वह सहज ही उस 'अधिकृत' रूप–प्रकार को लाते हैं ताकि उसमें उसे ढाल सकें।''
त्रिलोचन के काव्य–कौशल में सम्भाषण कला भी शामिल है। उनकी कविता में उद्‌बोधन और सम्बोधन अक्सर पाये जाते हैं। बातचीत की कला के कारण ही। इस वजह से उनकी रचनाओं में पूरे वाक्य का बाहुल्य मिलता है। इसलिए उनको विश्वनाथ त्रिपाठी ने शब्दों का नहीं, 'वाक्यों का कवि' कहा है। त्रिलोचन हिन्दी वाक्यों में हिन्दी कविता लिखते हैं। भाषा–बोध की इकाई वाक्य है, शब्द नहीं। अवधी का वैभव उनकी काव्य–भाषा में छलकता रहता है। आश्चर्य नहीं कि वाक्यनिष्ठा इसी अहसास से पैदा हुई हो कि मैं खड़ी बोली बोलने वाला नहीं हूँ।
अपने समय में दाखिल होने से पहले त्रिलोचन को छायावादी काव्यभाषा विरासत में मिली थी और काव्यवस्तु छायावादोत्तर कवियों की। मगर अपने समय–विवेक से उन्होंने सामान्यजन तथा उनकी सामान्य भाषा का चुनाव किया। उन्होंने छायावादी काव्यभाषा की निर्जीवता तथा अलंकृति एवं छायावादोत्तर कवियों की वैयक्तिक भावभूमि से परे जाकर बोलचाल के मुहावरे को पकड़ने की कोशिश की और आम आदमी की जीवन्त भाषा को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। उनको इस हकीकत का अहसास था कि भाषा में अत्यधिक परिष्कार तथा बनाव–सिंगार आदि पतनशील साहित्य के लक्षण हैं। जिन कवियों का जनजीवन से सरोकार नहीं होता, वही जीवन की भाषा से दूर रहते हैं और अभिजात भाषा की दुनिया में काव्य–सृजन करते हैं। बहुजन समुदाय तक अपने सन्देशों को सम्प्रेषित करने के लिए प्रायः सभी प्रगतिशील कवियों ने बोलचाल की भाषा को ही काव्यभाषा का दर्जा दिया। इस मायने में उनके आदर्श कबीर, तुलसी, भारतेंदु और निराला रहे। मुक्तिबोध मुझे 'कठिन काव्य के प्रेत' तो नहीं, पर कठिन काव्य के सचेत कवि अवश्य प्रतीत होते हैं। उन्होंने भी माना है कि ''प्रगतिशील कविता की एक प्रमुख प्रवृत्ति पुरानी काव्यभाषा का त्याग और बातचीत की–सी सामान्य भाषा का उपयोग करना है। डॉ. रामविलास शर्मा भी साहित्य के लिए जनभाषा को ही उपयुक्त मानते हैं। उनके अनुसार ''भाषा का नागरिक बनाव–सिंगार और टीम–टाम उसकी शक्ति को क्षीण करता है।''[13] शमशेर बहादुर सिंह ने भी कवियों को नसीहत दी है कि ''कवि को जनता के स्तर पर आकर उसकी भाषा को अपनाना चाहिए ताकि कृत्रिम भाषा से भी छुटकारा मिल सके और सारे छद्‌मों को त्यागा जा सके।''[14] नागार्जुन भी ठीक यही बात कहते हैं। भाषा के जीवित रूप को साधने के लिए आंचलिक माहौल या धरती का माहौल होना महत्त्वपूर्ण होता है। त्रिलोचन तो कविता का प्राण ही बातचीत की भाषा को मानते हैं, अभिजात भाषा को नहीं। उनकी स्पष्ट मान्यता है कि ''जीवित भाषा किताबों से नहीं, जीवन से आती है और वही कविता में ताजगी लाने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका भी निभाती है।''[15] औरों से यानी समकालीन भाववादी कवि मित्रों से स्वयं को अलगाते हुए त्रिलोचन कहते हैं, जैसे मुक्तिबोध कहते हैं 'कविता में कहने की मेरी आदत नहीं है, वैसे ही–

''बड़े–बड़े शब्दों में बड़ी–बड़ी बातों को
कहने की आदत औरों में है पर मेरा
ढर्रा अलग गया है ढाको के पातों को
थाली की मर्यादा देकर पहला घेरा
तोड़ दिया।''[16]

गरज कि त्रिलोचन की लोकधर्मिता ने बोलचाल के शब्दों को काव्यभाषा का दर्जा देकर परम्परा का भंजन किया है। बहरहाल,

प्रगतिवादी काव्य चिन्तन ने व्यापक सम्प्रेषण के लिए तथा सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्तिक्षम बनाने के लिए बोलचाल या लोकभाषा को ही अंगीकार किया। प्रगतिशील कवियों की इस अवधारणा का स्वागत आलोचकों ने भी किया है।''[17] नामवर सिंह ने इसे 'कवि का एक गम्भीर नैतिक साहस' कहकर महिमामंडित किया है। पश्चिमी जर्मनी के हिन्दी विद्वान लोठार तुत्से ने इस घटना को अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना है– ''कविता में विशिष्ट पद–योजना और छन्दबद्धता को ठुकरा दिया गया तथा लोकभाषा हिन्दी की काव्यगत सम्भावनाएँ खोज निकाली गयीं। कविता की भाषा का लोकतन्त्रीकरण किया गया है।''[18]

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहे तो जैसा कि पहले संकेत किया गया है कि जब–जब लोकभाषा तथा काव्यभाषा के बीच फासला बढ़ा है तब–तब काव्य–भाषा में क्रान्तियाँ हुई हैं। इसीलिए टी.एस. इलियट ने बार–बार चेतावनी दी है कि कविता को दैनिक बोलचाल की भाषा से दूर नहीं हटना होगा। जब काव्यभाषा कृत्रिम और निर्जीव होने लगती है तो उसे लोकभाषा की शरण में आना पड़ता है। अपभ्रंश, प्राकृत तथा बोलियों का साहित्यिक भाषा के रूप में अवतार इसी क्रान्तिकारी प्रवृत्ति का प्रमाण है। इसीलिए वर्ड्सवर्थ ने इस बात पर बल देने के लिए स्पष्ट घोषणा कर दी कि लोकभाषा और काव्यभाषा में कोई तात्त्विक अन्तर नहीं होता। उनमें अद्वैत सम्बन्ध होता है। इस सम्बन्ध में कॉलरिज का बहुश्रुत विरोध कोई मायने नहीं रखता। दोनों के अन्तर्विरोध का समाधान करते हुए लिखा है कि ''कोई भी कविता ठीक–ठीक वही वाणी नहीं होती जिसे कवि बोलता और सुनता है। किन्तु अपने समय की वाणी से उसका ऐसा सम्बन्ध होना चाहिए कि श्रोता या पाठक कह सके कि, यदि मैं कविता में बोलता तो इसी प्रकार बोलता।''[19]

संदर्भ

1. बी.एल. होर्फ, 'लैंग्वेज : थॉट एंड रियलिटी', पृ. 258
2. जैमिनी, 'मीमांसासूत्र' 11.1.46
3. एफ.आर. लीविस, 'न्यू बियरिंग्स इन इंग्लिश पोएट्री', पृ. 12
4. 'अज्ञेय', 'धर्मयुग', साप्ताहिक, पृ. 17, बम्बई, 21 अगस्त 1966
5. परमानन्द श्रीवास्तव, 'त्रिलोचन के बारे में', सम्पा. गोविन्द प्रसाद, आलेख 'शब्दों में जीवन', पृ. 203
6. परमानन्द श्रीवास्तव, 'त्रिलोचन के बारे में', सम्पा, गोविन्द प्रसाद, आलेख 'शब्दों में जीवन', पृ. 202
7. नामवर सिंह, त्रिलोचन के बारे में, सम्पा. गोविन्द प्रसाद, 'एक नया काव्यशास्त्र त्रिलोचन के लिए', पृ. 78
8. त्रिलोचन, 'शब्द', पृ. 32
9. रामस्वरूप चतुर्वेदी, 'आधुनिक कविता–यात्रा', पृ. 147
10. त्रिलोचन, 'ताप के ताये हुए दिन', पृ. 66
11. त्रिलोचन, 'मेरा घर', पृ. 29
12. 'आलोचना', जुलाई–सितम्बर 67, पृ. 135
13. 'आलोचना', जुलाई–सितम्बर 67. पृ. 135
14. डॉ. नीरव अडालजा, 'प्रगतिशील कवियों का काव्यचिन्तन', पृ. 278 53.
15. रामविलास शर्मा, 'आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान', पृ. 176
16. 'धर्मयुग', 13 अगस्त, 1972, पृ. 23
17. सम्पा. ओम भारती, 'महत्त्व' स्मारिका (त्रिलोचन) 5–6 जून 1982, पृ. 7
18. त्रिलोचन, 'उस जनपद का कवि हूँ', पृ. 116
19. नामवर सिंह, 'कविता के नए प्रतिमान', पृ. 116